पञ्चवर्षीय विकास-योजना के अन्तर्गत : पुराणानुशीलन

पुराण-विषयानुक्रमणी

प्रथम भाग

[राजनीतिक]

पुराण-विषयानुक्रमणी

प्रथम भाग

[राजनीतिक]

डॉ० राजबली पाण्डेय, एम० ए०, डी० लिट्.
प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व

तथा

प्रिंसिपल
भारती महाविद्यालय
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी
सं० २०१४ वि०, १९५७ ख्रिष्टीय

प्रकाशक

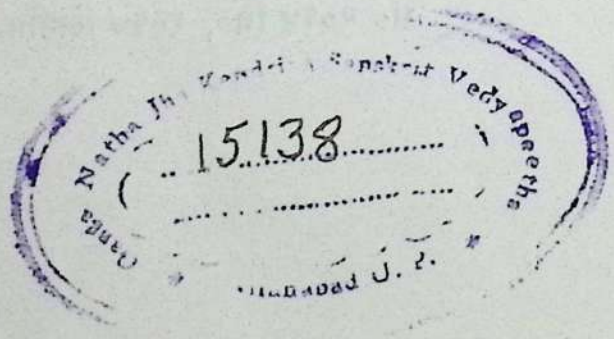
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय

H
272
PAN/P.B

प्रथम संस्करण – १००० प्रतियाँ
सं० २०१४ वि०, १९५७ खिष्टीय
मूल्य १५)

मुद्रक

शारदा मुद्रण, काशी



प्रस्तावना

भारतीय वाङ्मय में पुराण-साहित्य का बहुत ही महत्त्वपूर्ण और ऊँचा स्थान है। अथर्ववेद[1] तो पुराण को अन्य वैदिक संहिताओं का समकक्ष समझता है। उसके अनुसार ऋक्, साम, छन्द और पुराण सभी यजुष् (यज्ञहविष्) के साथ उत्पन्न हुए। ब्राह्मण-ग्रन्थों में तो पुराण को वेद ही कहा है। शतपथ ब्राह्मण[2] में अध्वर्यु यह कहते हुए पुराण की प्रशंसा करता है कि "पुराण वेद ही है। वह यही है।" उपनिषदों[3] में इस बात का व्याख्यान किया गया है कि महाभूत (ब्रह्म) के निःश्वास से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्वाङ्गिरस्, इतिहास, पुराण, विद्या, उपनिषद्, श्लोक, सूत्र, अनुव्याख्यान, व्याख्यान ये सब निकले। छान्दोग्योपनिषद्[4] में तो इतिहास-पुराण को पंचम वेद ही माना गया है। किन्तु उपर्युक्त कथनों से यह नहीं समझना चाहिए कि जिस "पुराण" का उल्लेख वैदिक साहित्य में है वह परवर्ती अष्टादश पुराण हैं। परन्तु यह सत्य है कि उसका समावेश अष्टादश पुराणों में हो गया। इतना ही नहीं, भारतीय परम्परा का यह दावा है कि पुराण वैदिक साहित्य के ऊपर व्याख्यान और उपाख्यान हैं और इनकी सहायता के बिना आज वैदिक साहित्य समझा नहीं जा सकता :

यो विद्याच्चतुरो वेदान्साङ्गोपनिषदो द्विजः।
न चेत्पुराणं संविद्यान्नैव स स्याद्विचक्षणः॥
इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्।
बिभेत्यल्पश्रुताद्वेदो मामयं प्रहरिष्यति॥

वायु० १।२००–१
पद्म० ५।२।५०–२
शिव० ५।१।३५

---

१ ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह।
उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिविदेवा दिविश्रितः॥ अथर्ववेद ११।७।२४

२ अध्वर्युस्ताद्ये वै पश्यतो राजयेत्याह—पुराणं वेदः सोऽयमिति किञ्चित् पुराणमाचक्षीत। शतपथ० १३।४।३।१३

३ बृहदारण्यक० २।४।१०, तुल० शतपथ० १४।६।१०।६

४ सहोवाच ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमथर्वणं चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदम्। छान्दोग्य० ७।१।१

(जो द्विज अङ्गों और उपनिषदों के साथ चारों वेदों को जानता है, किन्तु पुराण को सम्यक् प्रकार से नहीं जानता है, वह विचक्षण नहीं हो सकता। इतिहास-पुराण के द्वारा वेद का उपबृंहण (संवर्धन=अध्यनाध्यापन) करना चाहिये। अल्पश्रुत से वेद डरता है कि यह मुझ पर प्रहार करेगा।)

पुराण ने काल-क्रम से सम्पूर्ण वैदिक साहित्य के साथ अन्य नवोदित शास्त्रों को भी अपने विशाल प्राङ्गण में स्थान देना प्रारम्भ किया। पुराणों ने जब अपना परवर्ती पौराणिक स्वरूप ग्रहण किया तब उनमें निम्नलिखित विषय प्रविष्ट हुए।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्॥ वायु० ४।१०

[सर्ग (सृष्टि-विज्ञान), प्रतिसर्ग (सृष्टि के अन्तर्गत विकास, लय और पुनः सृष्टि), वंश (देवता और ऋषियों की वंशावली), मन्वन्तर (चतुर्दश मनुओं का काल-विभाजन और घटना-वर्णन) तथा वंशानुचरित (राजवंशों का इतिहास), ये पुराणों के पञ्चलक्षण (विशिष्ट विषय) हैं।] वैदिक संहिताओं के समान ही पौराणिक साहित्य का संघटन भी प्रारम्भ हुआ। परम्परा के अनुसार वेदव्यास ने वैदिक संहिताओं को उनका वर्तमान रूप दिया। महाभारत-काल में वेदव्यास ने ही पुराणों की रचना की ऐसा माना जाता है। यदि यह सर्वथा सत्य न भी हो तो भी यह मानने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती कि प्रायः उसी समय प्राचीन पौराणिक परम्परा का संकलन और सम्पादन भी हुआ और उनके मुख्य विषय उपर्युक्त पाँच थे।

पुराणों में अपने विस्तार की अनन्त शक्ति थी। 'पुराण' का एक अर्थ था पुरा (पुराना)+नव (नया)। इसके अनुसार प्रत्येक आनेवाले युग में पुराणों में नयी सामग्री जुटती गयी। इससे केवल पुराणों के कथा-भाग में ही वृद्धि नहीं हुई, अपितु विषय की दृष्टि से भी उनमें नये विषयों का समावेश हुआ। देश में प्रचलित जितने ज्ञान-स्रोत थे, उन सभी को यथासंभव आत्मसात् कर पुराणों ने विशाल संहिता का रूप ग्रहण किया। विष्णुपुराण में पुराणों के विस्तार और विकास का संकेत निम्नलिखित प्रकार से किया गया है :

"इसके पश्चात् पुराणार्थ के विशेषज्ञ वेदव्यास ने आख्यान, उपाख्यान, गाथा और कल्प-शुद्धि के सहित पुराण-संहिता को रचा। रोमहर्षण सूत व्यास जी के प्रसिद्ध शिष्य हुए। महा-मति व्यास ने उनको पुराण-संहिता का अध्ययन कराया। उस सूत के सुमति, अग्निवर्चा, मित्रायु, शांसपायन, अकृतव्रण और सावर्णी—ये छः शिष्य थे। इनमें से काश्यपगोत्रीय अकृतव्रण, सावर्णी और शांसपायन—ये तीनों तीन संहिताओं के कर्ता थे। उन तीनों संहिताओं की आधारभूत एक रोमहर्षण जी द्वारा रचित मूल संहिता थी। उन्हीं चार संहिताओं का सारभूत मैंने यह विष्णु-

पुराण संहिता बनायी है[1]।" पुराण संहिता में जो नये विषय अन्तर्भुक्त हुए उनकी व्याख्या इस प्रकार की गयी है :

स्वयं दृष्टार्थकथनं प्राहुराख्यानकं बुधाः।
श्रुतस्यार्थस्य कथनमुपाख्यानं प्रचक्षते॥
गाथास्तु पितृपृथ्वीप्रभृतिगीतयः।
कल्पशुद्धिः श्राद्धकल्पादिनिर्णयः॥ विष्णु० ६

[विद्वानों ने स्वयं देखे हुए विषयों के कथन को आख्यान कहा है। सुने हुए विषय के कथन को उपाख्यान कहा जाता है। पितर, पृथ्वी आदि के प्रशंसात्मक गीतों को गाथा कहते हैं। श्राद्ध-कल्पादि का निर्णय कल्पशुद्धि है।]

पञ्चलक्षणात्मक पुराणों ने विकसित होकर पुराण-संहिता का रूप धारण किया, किन्तु यह विकास यहीं रुका नहीं। पुराणसंहिताओं ने क्रमशः महापुराणों का रूप धारण किया। जिस प्रकार आधुनिक इतिवृत्त में आचार, व्यवहार, धर्म, भूगोल आदि सम्पूर्ण जीवन तथा सृष्टि का विवरण पाया जाता है, उसी प्रकार महापुराणों में भी इन विषयों का अन्तर्भाव हुआ। ब्रह्मवैवर्त-पुराण में पुराण, उपपुराण तथा महापुराण के लक्षण वर्णित हैं :

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं विप्र पुराणं पञ्चलक्षणम्॥
एतदुपपुराणानां लक्षणञ्च विदुर्बुधाः।
महताञ्च पुराणानां लक्षणं कथयामि ते॥
सृष्टिश्चापि विसृष्टिश्च स्थितिस्तेषाञ्च पालनम्।
कर्मणां वासना वार्ता मनूनाञ्च क्रमेण च॥
वर्णनं प्रलयानाञ्च मोक्षस्य च निरूपणम्।

---

१ आख्यानैश्चाप्युपाख्यानै र्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः।
पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः॥
प्रख्यातो व्यास शिष्योऽभूत्सूतो वै रोमहर्षणः।
पुराणसंहितां तस्मै ददौ व्यासो महामतिः॥
सुमतिश्चाग्निवर्चाश्च मित्रायुश्शांसपायनः।
अकृतव्रणसावर्णी षट् शिष्यास्तस्य चाभवन्॥
काश्यपः संहिताकर्ता सावर्णिश्शांसपायनः।
रोमहर्षणिका चान्या तिसृणां मूलसंहिता॥
चतुष्टयेन भेदेन संहितानामिदं मुने॥ ३-६।१५-१९

उत्कीर्तनं हरेरेव देवानाञ्च पृथक् पृथक्॥
दशविधं लक्षणं महतां परिकीर्तितम्।
संख्यानञ्च पुराणानां निबोध कथयामि ते॥ ब्रह्मवैवर्त० १३०।६

[हे विप्र! सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर एवं वंशानुचरित पुराणों के पञ्च लक्षण हैं। विद्वानों ने उपपुराणों के भी ये ही लक्षण बतलाये हैं। तुमसे महापुराणों के लक्षण बतलाता हूँ। सृष्टि, विसृष्टि, स्थिति, उसका पालन, कर्म की वासना, मनुओं की क्रम से वार्ता, प्रलयों का वर्णन, मोक्ष का निरूपण, विष्णु एवं अन्य देवताओं का पृथक्-पृथक् उत्कीर्तन, महापुराणों के ये ही दशविध लक्षण बतलाये गये हैं। इनके पश्चात् पुराणों की संख्या बतलाता हूँ, सुनो।]

उपर्युक्त अवतरण में पुराण एवं उपपुराण के लक्षण एक ही बतलाये गये है। किन्तु स्पष्टतः उपपुराण पुराणों की अपेक्षा पीछे रचे गये और इनका स्वतंत्र ऐतिहासिक महत्व कम है। पुराणों में ही एकाधिक अतिरिक्त विषयों का समावेश कर तथा कभी कभी दूसरे पुराणों का सार-संग्रह कर पुराण-संहिताओं की रचना हुई थी। संहिताओं में नाना विषयों के संकलन तथा नियोजन से महापुराणों का प्रादुर्भाव हुआ। ज्योतिष, वास्तुशास्त्र, वार्ता, अर्थनीति, समाजशास्त्र, राजनीति, छन्दशास्त्र, व्याकरण, पशुविज्ञान, रत्नपरीक्षा, आयुर्वेद, श्राद्धकल्प, व्रतकथा प्रभृति बहुत से नये विषयों का समावेश महापुराणों में हुआ। इस कथन में अत्युक्ति न होगी कि महा-पुराण अपने समय के विश्वकोष थे।

ऐसे विशाल तथा विश्वकोषीय साहित्य के विषयों का क्रमबद्ध एवं वर्गीकृत-परिचय भारतीय इतिहास तथा संस्कृत के अध्ययन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। अंग्रेजी भाषा के माध्यम से इस प्रकार का थोड़ा प्रयत्न हुआ भी है। मद्रास विश्व विद्यालय के भूतपूर्व एवं दिवंगत विद्वान् तथा इतिहास एवं पुरातत्व विभाग के अध्यक्ष प्रो० वी० आर० आर० दीक्षितार ने पाँच पुराणों—भागवत०, ब्रह्माण्ड०, मत्स्य०, वायु०, तथा विष्णु०—के आधार पर पुराणों की केवल नामानुक्रमणी (पुराण इण्डेक्स) नाम से प्रकाशित की थी। यह ग्रंथ उपयोगी है, किन्तु पर्याप्त व्यापक नहीं। ग्रंथ के देखते ही विषयगत जानकारी इससे प्राप्त नहीं हो सकती। अतः पुराणों की एक विषयानुक्रमणी की आवश्यकता थी।

दिवंगत आचार्य नरेन्द्रदेव जी के कुलपतित्व के समय प्रथम पञ्चवर्षीय विकास योजना के अन्तर्गत विश्वविद्यालय को भारतीय प्राच्य विद्याओं के अनुशीलन के लिए भारतीय सरकार से सहायता मिली थी। उसी के अन्तर्गत पुराणानुशीलन को भी स्थान मिला। निश्चय हुआ कि "पुराण-विषयानुक्रमणी" प्रकाशित की जाय। इसकी निम्नाङ्कित विषय-योजना प्रस्तुत हुई :

१ भूगोल

(१) भुवन-कोष (विश्व-भूगोल)
(२) भारतीय भूगोल
(३) भौतिक भूगोल
(४) स्थान-नाम
(५) खण्ड
(६) खगोल

२ जातियाँ, उपजातियाँ, समुदाय

३ जनपद

४ इतिहास एवं- राजनीति

५ विधि एवं आचार (प्रथायें)

६ समाज

७ धर्म

८ दर्शन

९ साहित्य

१० कला

११ अर्थशास्त्र

इस योजना के प्रथम तीन भाग पौराणिक भूगोल के अन्तर्गत श्री डा० वासुदेवशरण अग्रवाल, अध्यक्ष कला तथा स्थापत्य विभाग, भारती महा विद्यालय, का०वि०वि० को सौंपे गये। शेष चतुर्थ से एकादश भाग का काम प्रस्तुत लेखक को दिया गया। इस विभाजन के अनुसार प्रथम तीन भागों के विषय पौराणिक भूगोल के नाम से प्रकाशित होंगे। शेष की भाग-संख्या क्रमशः विषयानुसार चलेगी। प्रथम भाग राजनीतिक है। इसमें प्रायः पुराणों के "वंशानुचरित" अंश से सामग्री ली गयी है। इसके अन्दर प्रधानतया राजवंश, व्यक्तिगत राजा, राज्यावधि, जनपद, राज्य, नगर आदि दिये गये हैं। राजाओं की सम्पूर्ण जीवनी न देकर उनके जीवन की महत्वपूर्ण घटनाओं का ही उल्लेख किया गया है। राजनीति से सम्बन्ध रखने वाले कतिपय अन्य शब्द भी इस भाग में आगये हैं। वंशानुचरित अथवा राजवंशावलियाँ लगभग छः हजार वर्ष पूर्व अयोध्या में मानव वंश की स्थापना से लेकर चौथी शती के प्रारम्भ में गुप्त साम्राज्य के प्रारम्भ तक पायी जाती हैं।

सामग्री-संकलन के स्रोतों के विषय में थोड़ा संकेत करना आवश्यक है। महापुराणों में निम्नलिखित की गणना की गयी है :

१–ब्रह्मपुराण
२–पद्मपुराण
३–विष्णुपुराण
४–शिवपुराण
५–भागवतपुराण
६–नारदीयपुराण
७–मार्कण्डेयपुराण
८–आग्नेयपुराण
९–भविष्यपुराण
१०–ब्रह्मवैवर्तपुराण
११–लिंगपुराण
१२–वराहपुराण
१३–स्कन्दपुराण
१४–वामनपुराण
१५–कूर्मपुराण
१६–मत्स्यपुराण
१७–गरुडपुराण
१८–ब्रह्माण्डपुराण
१९–वायुपुराण
२०–विष्णुपुराण

अठारह महापुराणों* में से केवल पाँच–वायु०, मत्स्य०, विष्णु०, ब्रह्माण्ड० तथा भागवत० में विशेषरूप से क्रमबद्ध वंशानुचरित और राजनीतिक वर्णन पाया जाता है। किन्तु अन्य

---

* विष्णु० तथा भाग० में, जो १८ महापुराणों की संख्या है, उसमें वायु० के स्थान पर शिव० का नाम है। इसके विपरीत मत्स्य० में शिव० के स्थान पर वायु० का नाम है। इनमें विष्णुधर्मोत्तर का उल्लेख नहीं है, किन्तु पुस्तक (वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई) में वह महापुराण कहा गया है।

पुराणों में भी आनुषंगिकरूप से सामग्री मिलती है। जिन पुराणों का अधिकतर उपयोग हुआ है, उनके निम्नलिखित संस्करण काम में लाये गये हैं :—

(१) ब्रह्मपुराण	श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई, सं० १९६३ वि०
(२) विष्णुपुराण	जीवानन्द विद्यासागर संस्करण, कलकत्ता, सं० १९३९ वि०
(३) वायुपुराण	आनन्दाश्रम, पूना, सन् १९०५ ई०
(४) भागवतपुराण	निर्णय सागर, बम्बई, सन् १९२३ ई०
(५) माकण्डेयपुराण	श्री पंचानन तर्करत्न द्वारा सम्पादित, कलकत्ता, सं० १८१२
(६) अग्निपुराण	लक्ष्मी वेङ्कटेश्वर प्रेस, कल्याण-बम्बई, सम्वत् १९७७ वि०
(७) भविष्यपुराण	श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई, सं० १९४७ वि०
(८) मत्स्यपुराण	आनन्दाश्रम, पूना।
(९) गरुडपुराण	जीवानन्द विद्यासागर संस्करण, कलकता
(१०) ब्रह्माण्डपुराण	श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई सं०१९६३ वि०
(११) विष्णुधर्मोत्तरपुराण	श्रीवेङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई, सं० १९६३ वि०

कहीं कहीं पर मत्स्यपुराण के गुरुमण्डल ग्रन्थमाला, कलकता (१९५४ ई०) तथा विष्णु-पुराण के गोपाल नारायण मुद्रणालय, बम्बई (शक १८२४) संस्करणों का भी उपयोग किया गया है। ऐसी दशा में इनका अलग से उल्लेख हुआ है।

पौराणिक अध्ययन के सम्बन्ध में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि अभी तक उनके वैज्ञानिक पद्धति से सुसम्पादित संस्करण उपलब्ध नहीं हैं। ऐसे संस्करण कब तक प्राप्त हो सकेंगे, यह कहा नहीं जा सकता। अतः प्रस्तुत प्रयास प्रारम्भिक अन्वेषण के रूप में किया गया है, इस आशा से कि भविष्य में इसी विषय पर अधिक प्रामाणिक विवरण संभव हो सकेगा। पुराणों के प्राप्त संस्करणों में बहुत से स्थलों पर पाठ भ्रष्ट हैं, जिनसे कभी कभी तो अभीष्ट अर्थ निकालना भी कठिन हो जाता है। विभिन्न पुराणों में एक ही व्यक्ति तथा स्थान के पाठान्तर मिलते हैं, वे यथासम्भव प्रस्तुत ग्रन्थ में दे दिये गये हैं। परन्तु सबसे बड़ी कठिनाई वहाँ उपस्थित होती है, जहाँ परस्पर एक ही राजवंश की पीढ़ियों में महान् अन्तर मिलता है। यदि एक पुराण के एक ही वंश में एक राजा तीसरी पीढ़ी में है तो दूसरे पुराण मे वही राजा उसी वंश में चौथी अथवा

पाँचवीं पीढ़ी में[1]। इस प्रकार एक राजा जो एक पुराण में किसी का पुत्र है तो दूसरे पुराण में पौत्र अथवा प्रपौत्र। इन स्थलों में यथासंभव समस्याओं के सुलझाने का प्रयत्न किया गया है, जहाँ ऐसा संभव नहीं हुआ है, वहाँ विभिन्न पुराणों के भेद स्पष्ट दिखा दिये हैं। पुराणों में व्यक्तियों के लिङ्गभेद भी मिलते हैं। एक पुराण में यदि कोई नाम स्त्रीवाचक है तो दूसरे पुराण में पुरुषवाचक[2]।

इन पुराणों में से मत्स्य०, वायु० तथा ब्रह्माण्ड० के पाठों में बहुत ही समता है, विशेषकर वायु० और ब्रह्माण्ड० के बीच, ऐसा स्पष्ट लगता है कि इन तीनों का मूल कोई एक था। तीनों पुराण एक स्वर से कहते हैं कि उनमें भविष्यपुराण में वर्णित राजवंशावली ज्यों की त्यों ले ली गयी है :

तान् सर्वान् कीर्तयिष्यामि भविष्ये पठितान् नृपान्। मत्स्य० १।४
तान् सर्वान् कीर्तयिष्यामि भविष्ये पठितान् नृपान्। वायु० १।१३-१५
भविष्ये ते प्रसंख्याताः पुराणज्ञैःश्रुतर्षिभिः। ब्रह्माण्ड० १।१।१७

राजवंशों का उल्लेख प्रामाणिकरूप से मुख्यतः उपर्युक्त तीन पुराणों में मिलता है। इसी प्रकार विष्णु० तथा भाग० के राजवंशवर्णनों में पर्याप्त समता है। केवल अन्तर यह है कि भाग० का वर्णन पद्य तथा विष्णु० का गद्य में है। पद्यात्मक होने से भागवत० में वर्णन की स्वतंत्रता कम है, अतः विवरण अत्यन्त संक्षिप्त है। प्रथम तीन पुराणों की तुलना में तो इन

---

१. उदाहरणार्थ देखिए, क्षत्रौजस् (पुराणविषयानुक्रमणी पृ० ८२-८३) जहाँ वायु० (९९।३१७) के अनुसार अजात-शत्रु के पश्चात् क्षत्रौजस् का नाम आता है, किन्तु विष्णु० (४।२४।३) में क्षत्रौजस् का पुत्र बिन्दुसार और उसका पुत्र अजातशत्रु है। ब्रह्माण्ड० (३।७४।१३०) में भी इसी क्रम में अजातशत्रु का नाम तो आता है, किन्तु वहाँ बिन्दुसार के स्थान में विधिसार पाठ है।
इसी प्रकार दिलीप (२) (पुराण विषयानुक्रमणी पृ० १२७) में विष्णु० (४।४।३८-३९) वायु० (८८।१८१-१८२) तथा भाग० (९।९।४१, ९।१०।१-३) के अनुसार दिलीप (द्वितीय) की वंश-परम्परा इस प्रकार है—दिलीप—दीर्घबाहु—रघु—अज—दशरथ, किन्तु मत्स्य० (१२।४८-४९) में इसका क्रम रघु—दिलीप—अजक—दीर्घबाहु—अजपाल—दशरथ है:
(रघोरभूद्दिलीपस्तु दिलीपादजकस्तथा। दीर्घबाहुरजाजातश्चाजपालस्ततोनृपः। तस्माद्दशरथो जातस्तस्य पुत्रचतुष्टयम्।)

२—उदाहरणार्थ देखिए, बध्यश्व, (पुराणविषयानुक्रमणी पृ० २२९) जिसमें मत्स्य० (५०।६) के अनुसार इन्द्रसेन ब्रह्मिष्ठ के पुत्र का नाम है—(इन्द्रसेनः सुतस्तस्य) किन्तु वायु० (९९।२००) में इन्द्रसेना एक स्त्री का नाम है, जिसका पुत्र बध्यश्व है। (इन्द्रसेना यतो गर्भं बध्यश्वं प्रत्यपद्यत।)

दोनों का वर्णन सूचीमात्र है। विष्णु० तथा भागवत० के वर्णनों में कहीं कहीं अन्तर भी पाया जाता है, विशेषकर नामों और तिथि-क्रम के सम्बन्ध में। गरुड० में वंशानुचरित और भी संक्षिप्त है। राजवंशों में केवल पौरव, ऐक्ष्वाकु तथा बार्हद्रथ का ही उल्लेख इसमें पाया जाता है। स्पष्टतः यह संकलन पूर्वोक्त पुराणों से पीछे का है। भविष्य० मूलतः वैसे तो बहुत पुराना और कतिपय पुराणों की राजनीतिक सामग्री का मूल स्रोत है, परन्तु परवर्ती प्रक्षेपों और मिश्रणों ने इसके पाठ को बहुत ही भ्रष्ट कर दिया है। अतिरंजन, वंशानुक्रम तथा तिथिक्रम में विपर्यय, काल्पनिक वर्णन आदि से इसका ऐतिहासिक मूल्य बहुत कम हो गया है। इसमें उन्नीसवीं शती तक की अर्वाचीन सामग्री का समावेश हुआ है।

पुराणों के सम्बन्ध में दूसरा विकट प्रश्न है, उनका रचना-काल और प्रामाणिकता। इनके स्थिर न होने के कारण बहुत से इतिहासकारों ने पौराणिक साक्ष्य की पूर्ण अवहेलना की और भारत के प्राचीन इतिहास के निर्माण में उनका उपयोग नहीं किया। परन्तु अब इस बात के पुष्कल प्रमाण उपलब्ध हैं कि पुराणों की अपनी मौलिक ऐतिहासिकता है और उनमें प्रभूत विश्वसनीय सामग्री है और उनको संहिता का रूप महाभारत के समय वेदव्यास ने दिया। इसमें सन्देह नहीं कि पुराणों के मूल अंश बहुत ही पुराने हैं, किन्तु जिस रूप में पुराण आज पाये जाते हैं वे रचना की दृष्टि से भाषा के आधार पर इतने पुराने नहीं माने जा सकते, साथ ही विषय की दृष्टि से भी उनके बहुत अंश परवर्ती तथा अर्वाचीन हैं। परन्तु फिर भी पाश्चात्य विद्वानों ने जितना पीछे उनको खींचा, उतने आधुनिक वे नहीं हैं।

श्री एच० एच० विलसन के मतों से पुराणों के काल के सम्बन्ध में बहुत भ्रम उत्पन्न हुआ। विष्णुपुराण का अध्ययन करते समय कुछ पुराणों में मुसलमानों का उल्लेख देखकर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि वह पुराण लगभग १०४५ ई० में लिखा गया। वास्तव में ऐसे अंश प्रक्षिप्त और बहुत पीछे के असम्पादित रूप में जोड़े हुए हैं। पुराणों के उल्लेख तथा अन्तः-साक्ष्य से पुराणों की प्राचीनता बहुत सुदूर तक प्रमाणित होती है।

अलबेरूनी (१०३० ई०) ने अपने ग्रन्थ "तहकीके हिन्द[1]" में अठारह पुराणों की सूची दी है और विष्णुपुराण में उल्लिखित कतिपय पुराणों का पर्यायवाची नाम भी दिया है। उसने यह भी लिखा है कि मैंने मत्स्य०, आदित्य० और वायुपुराणों को देखा भी था। अतः १०३० ई० के पूर्व परम्परागत अठारह पुराणों का अस्तित्व निर्विवाद है। हर्षचरित के लेखक बाण (६२० ई०) ने लिखा है कि जब वह शोणभद्र के किनारे स्थित अपने गाँव में गया तो उसने सुदृष्टि नामक कथावार से "पवमानप्रोक्त" पुराण का पाठ सुना[2]। स्पष्टतः 'पवमानप्रोक्त' वायु का पर्याय है।

---

१. सखाउ का अनुवाद, भाग १, पृ० १३०, १३१, २६४

२. हर्षचरित (बम्बई-संस्करण) पृ० ८६

बाण ने अपनी रचनाओं में अग्नि०, भागवत०, मार्कण्डेय०, वायु०, आदि पुराणों का उपयोग किया है। नेपाल दरबार पुस्तकालय में सुरक्षित स्कन्दपुराण की एक हस्तलिखित प्रति गुप्ताक्षरों में बंगाल में प्राप्त हुई है जो लिपिशास्त्र के आधार पर सातवीं शती की मानी जा सकती है[१]। इसके अतिरिक्त गुप्तकालीन कतिपय भूमिदान-पत्रों में पद्म०, भविष्य० ब्रह्म०, तथा गरुडपुराण के उद्धरण पाये जाते हैं,[२] जो इस बात को सिद्ध करते हैं कि पाँचवीं शती ई० के पहले पुराण चिरपरिचित थे। वास्तव में पुराणों की प्रामाणिक राजवंशावलियाँ साम्राज्यवादी गुप्तों के आगमन के पूर्व ही समाप्त हो जाती हैं[३]। तीसरी शती में रचित मिलिन्द प्रश्न के प्रथम भाग में वेद और महाकाव्यों के साथ पौराणिक जानकारी का भी उल्लेख है। चौथी शती ई० पू० में लिखित अर्थशास्त्र से यह प्रकट है कि उस समय पुराण अपने प्रामाणिक रूप में वर्तमान थे। अर्थशास्त्र का लेखक कौटिल्य अथर्ववेद और इतिहास को चतुर्थ और पञ्चम वेद मानता है और इतिहास के अन्तर्गत पुराण, इतिवृत्त, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र की गणना करता है[४]। पाँचवीं शती ई० के आपस्तम्ब धर्मसूत्र के तृतीय अध्याय में भविष्य पुराण का उल्लेख पाया जाता है। श्री एफ० जी० पार्जिटर ने अपने ग्रन्थ "डायनेस्टीज आव दी कलि एज" (कलियुग राजवृतान्त)[५] में यह सिद्ध किया है कि भविष्यपुराण शुद्ध और मूल रूप में मत्स्य०, वायु०, ब्रह्माण्ड० आदि पुराणों का आदि स्रोत था। उन्होंने यह भी सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि पुराणों की राजनीतिक सामग्री का संकलन आन्ध्र वंश के राजा यज्ञश्री (द्वितीय शताब्दि ई० का अन्त) के समय में हुआ[६]। परिवर्द्धनों और प्रक्षेपों के होते हुये भी यह कहा जा सकता है कि पौराणिक सामग्री प्राचीन एवं प्रामाणिक है। हर्यङ्क-शैशुनाक वंश से लेकर आन्ध्र वंश तक जो पौराणिक वंशानुचरित अन्य साहित्यिक तथा पुरातात्विक साक्ष्यों से सम्पुष्ट है। कोई कारण नहीं कि हर्यङ्क वंश से पूर्व की पौराणिक राजनीतिक सामग्री उतनी विश्वसनीय न मानी जाय, यद्यपि अत्यन्त प्राचीन होने के कारण उसकी पुरातात्विक सम्पुष्टि संभव नहीं।

पौराणिक सामग्री की प्रामाणिकता और विश्वसनीयता के सूत्र पुराणों में पाये जाते हैं। वंश और वंशानुचरित का संकलन और संरक्षण कैसे होता था, इसका उल्लेख पुराणों में किया

---

१. ज० रा० ए० सो० १९०३, पृ० १९३

२. ज० रा० ए० सो० १९१२, पृ० २४८-५५

३. ब्यूहलर : इंडियन ऐंटिक्वेरी, जिल्द १५ (१८९६) पृ० ३२३

४. १।५

५. क्लरैंडन प्रेस, लंडन, १९१३

६. इन्ट्रोड० पृ० १३, (नोट-१)

गया है। "सूत" का इस कार्य से घनिष्ठ सम्बन्ध था। वायु पुराण के अनुसार देवताओं, ऋषियों तथा अत्यन्त तेजस्वी राजाओं के वंश का धारण (संरक्षण) एवं ब्रह्मवादियों द्वारा इतिहास-पुराण में उद्घोषित महात्माओं के श्रुत (परम्परा) का वर्णन सूत का कर्तव्य है।" पद्मपुराण[1] का भी प्रायः यही मत है। इससे प्रकट है कि राजवंशावलियों के संरक्षण का दायित्व सूत का था। सूत का मागध से सम्बन्ध था। वायुपुराण में गाथात्मक ढंग से इसका वर्णन है। वेन के पुत्र पृथु के यज्ञ के अवसर पर दोनों का प्रादुर्भाव हुआ। इससे यह अनुमान होता है कि महान् यज्ञों के समय राजाओं के वंश तथा यश का वर्णन सूत तथा मागध करते थे। इसी प्रकार सूत का सम्बन्ध "वन्दिन्" से भी था। एक स्थल पर "सूत" को "पौराणिक," "मागध" को "वंशप्रशंसक" और "वन्दिन्" को स्तावक कहा गया है। परम्परा से वंशों और वंशानुचरितों का संकलन और संग्रह होता रहता था। कई शब्दों से इसकी अभिव्यक्ति की गयी है, यथा, "श्रुत," "श्रुति" "स्मृति" "अनुश्रुत," इति नः श्रुतम्," "इति श्रुतम्" "इति श्रुतिः" आदि। जिस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में श्रुति और स्मृति का प्रयोग वेद और धर्मशास्त्र के लिए हुआ है, उसी प्रकार पुराणों में इन शब्दों का प्रयोग लौकिक परम्परा तथा ख्याति के लिए किया गया है।

उपर्युक्त पदावली से प्रकट होता है कि पुराण-रचना की एक सर्वमान्य पद्धति थी। प्रत्येक राजवंश के अपने मागध, वन्दिन् तथा चारण होते थे जो उसकी वंश-परम्परा को स्मरण रखते थे और उसकी यशगाथा को सुरक्षित। सूत का सम्बन्ध किसी एक राजवंश से नहीं था। उसका काम उच्च स्तर का और व्यापक होता था। वह देश के बहुसंख्यक राजवंशों, देवताओं, ऋषियों तथा महात्माओं के इतिवृत्तों का संग्रह और संरक्षण करता था। सूत के ऊपर पुराणकार होता था, जो सूतों की सामग्री का पुनः संकलन और सम्पादन कर वंशावलियों और वंशानुचरित को पुराण का रूप देता था। विष्णु० (६।८-४२) तथा वायु० (१०३।५८-६७) में ऐसे पुराणकारों की सूचियाँ निम्नाङ्कित प्रकार से दी हुई हैं :

	विष्णुपुराण		वायुपुराण
१	कमलोद्भव	१	ब्रह्मा
२	ऋभु	२	मातरिश्व
३	प्रियव्रत	३	उशना
४	भागुरि	४	वृहस्पति
५	स्तवमित्र	५	सविता

१. अ० १।२७-२८